



2026:AHC:36293-DB

ए.एफ.आर

उच्च न्यायालय इलाहाबाद

प्रथम अपील संख्या 989 वर्ष 2025

रोहिताश सिंह

...अपीलकर्ता

बनाम

रुचि

...प्रतिवादी

अपीलकर्ता के अधिवक्ता: संदीप कुमार श्रीवास्तव

प्रतिवादी के अधिवक्ता: बृजेश कुमार पांडेय

न्यायालय संख्या- 29

माननीय न्यायमूर्ति अरिंदम सिन्हा

माननीय न्यायमूर्ति सत्य वीर सिंह

(माननीय न्यायमूर्ति अरिंदम सिन्हा द्वारा सुनाया गया)

1. 12 नवंबर, 2025 को हमारे सामने एक अपील पेश की गई जिसमें कुछ कमियां थीं। कमी यह थी कि इसे पेश करने में 161 दिन की देरी हुई थी। हमने अपील को स्वीकार करने के लिए इस देरी को माफ़ कर दिया। अपील करने वाले पति की ओर से अधिवक्ता संदीप कुमार श्रीवास्तव और प्रतिवादी पत्नी की ओर से अधिवक्ता बृजेश कुमार पांडे पेश हुए।
2. अपील करने वाले का कहना है कि वह और प्रतिवादी दोनों ही परिवार न्यायालय के 21 अप्रैल, 2025 के उस फैसले से पीड़ित हैं जिसमें आपसी सहमति से तलाक के लिए उनकी संयुक्त याचिका को खारिज कर दिया गया था। न्यायालय ने यह पाया था कि पहली याचिका (संयुक्त याचिका) दाखिल करने के 18 महीने के भीतर दूसरी याचिका दाखिल नहीं की गई थी।
3. अधिवक्ताओं ने अपनी बात रखी और उस पर कायम रहे कि दोनों पक्षों के बीच समझौता अभी भी लागू है। उनके मुवक्किल आपसी सहमति से तय शर्तों पर अलग-अलग रास्ते अपनाना

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



चाहते हैं। दूसरी याचिका दाखिल करने में देरी की इस तकनीकी बात को उनके मामले के लिए घातक नहीं माना जा सकता। कानून की इस व्याख्या के लिए सर्वोच्च न्यायालय के 'अमरदीप सिंह बनाम हरवीन कौर' (2017) 8 एससीसी 746 मामले के फैसले का हवाला दिया गया, जिसमें कहा गया है कि हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13-बी की उप-धारा (2) केवल एक दिशा-निर्देश है, न कि अनिवार्य।

4. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13-ख नीचे दी गई है।

13ख. आपसी सहमति से तलाक़:-(1) इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, विवाह के दोनों पक्षकार मिलकर, चाहे विवाह, विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 (68 वर्ष 1976) के प्रारंभ होने से पूर्व या पश्चात संपन्न हुआ हो, इस आधार पर कि वे एक वर्ष या उससे अधिक समय से अलग रह रहे हैं, साथ रहने में असमर्थ हैं और उन्होंने आपसी सहमति से विवाह भंग करने का निर्णय लिया है, जिला न्यायालय में तलाक़ की डिक्री द्वारा विवाह विच्छेद हेतु याचिका प्रस्तुत कर सकते हैं।

(2) उपधारा (1) में संदर्भित याचिका की प्रस्तुति की तिथि से छह महीने से पहले नहीं और उक्त तिथि से अठारह महीने के बाद नहीं, दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इस बीच याचिका वापस नहीं ली गई है, तो न्यायालय पक्षकारों को सुनने के पश्चात और ऐसी जांच करने के पश्चात जैसा वह उचित समझे, इस बात से संतुष्ट होने पर कि विवाह संपन्न हुआ था और याचिका में किए गए कथन सत्य हैं, विवाह को डिक्री की तिथि से विघटित (विच्छेदित) घोषित करते हुए विवाह विच्छेद की डिक्री पारित करेगा।"

(ज़ोर दिया गया)

5. अमरदीप सिंह (उपरोक्त) मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ऐसे विवाहित दंपतियों के मामले पर विचार कर रहा था, जो धारा 13-बी की उपधारा (2) में दिए गए प्रतीक्षा अवधि की प्रतीक्षा किए बिना तत्काल आपसी तलाक़ चाहते थे। निर्णय का अनुच्छेद 20 नीचे दिया गया है।

"20. चूंकि हमारा मानना है कि धारा 13-बी (2) में उल्लिखित अवधि अनिवार्य नहीं बल्कि निर्देशात्मक है, इसलिए न्यायालय प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर अपने विवेक का प्रयोग कर सकता है, जहां पक्षों के सहवास पुनः शुरू करने की कोई संभावना नहीं है और वैकल्पिक पुनर्वास की संभावना है।"

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



6. सर्वोच्च न्यायालय के **अमित कुमार बनाम सुमन बेनीवाल मामले (2023) 17 एससीसी 648** में बाद के एक फैसले में **अमरदीप सिंह मामले** (ऊपर बताया गया) पर विचार किया गया। बेंच ने आगे कहा कि **अमरदीप सिंह मामले** में बताई गई बातें केवल उदाहरण हैं, पूरी सूची नहीं। बताई गई बातें ऐसी हैं जिन पर न्यायालय को ध्यान देना ज़रूरी है। अगर अमरदीप सिंह मामले में बताई गई सभी शर्तें पूरी होती हैं, तो न्यायालय को धारा 13-बी(2) के तहत कानूनी इंतज़ार की अवधि को माफ़ करने के लिए अपने विवेक का इस्तेमाल करना ही होगा। **अमित कुमार मामले** का पैराग्राफ 20 नीचे दिया गया है।

"20. अमरदीप सिंह बनाम हरवीन कौर मामले के पैराग्राफ 19 में बताई गई बातें केवल उदाहरण हैं पूरी सूची नहीं। ये ऐसी बातें हैं जिन पर न्यायालय को ध्यान देना ज़रूरी है। अगर ऊपर बताई गई चारों शर्तें पूरी होती हैं, तो न्यायालय को मैरिज एक्ट के सेक्शन 13-बी(2) के तहत कानूनी इंतज़ार की अवधि को माफ़ करने के लिए अपने विवेक का इस्तेमाल करना ही होगा।"

7. इसके बाद सर्वोच्च न्यायालय की एक बड़ी पीठ का फैसला आया - **शिल्पा शैलेश बनाम वरुण श्रीनिवासन [(2023) 14 एससीसी 231 (फैसले की तारीख 1 मई, 2023)]**। पाँच न्यायमूर्तियों की पीठ ने धारा 13-बी के उपधारा (1) और (2) पर भी विचार किया। पैराग्राफ 25 नीचे दिया गया है।

"25. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13-ख की उपधारा (2) में यह प्रावधान है कि पहली याचिका पारित होने के बाद, यदि याचिका इस बीच वापस नहीं ली जाती है, तो दंपति/पक्षकारों को दूसरी याचिका के साथ न्यायालय में जाना होगा, जो पहली याचिका के छह महीने बाद और अठारह महीने से अधिक नहीं होनी चाहिए। पहली याचिका के छह महीने बीतने से पहले पक्षकारों द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती। दूसरी याचिका दायर होने पर, न्यायालय को जांच करनी होगी, और याचिका में किए गए कथनों के सत्य होने की संतुष्टि होने पर, तलाक की डिक्री प्रदान की जाएगी। स्पष्ट रूप से, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13-ख की उपधारा (2) को शामिल करने के पीछे विधायी आशय यह है कि दूसरी याचिका दायर करने से पहले दंपति/पक्षकारों को आत्मनिरीक्षण करने और अलग होने के निर्णय पर विचार करने का समय मिले।"

(जोर दिया गया)

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अमरदीप सिंह (उपरोक्त) मामले में उपरोक्त निर्णय पर विचार करने के बाद, उच्च पीठ ने अपना मत व्यक्त किया, जैसा कि अनुच्छेद 33 से स्पष्ट है, जो नीचे दिया गया है।

33. हमारी राय में, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13-बी, संयुक्त आवेदन पर आपसी सहमति से तलाक की डिक्री प्रदान करने के लिए इस न्यायालय की शक्तियों पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाती है जब धारा की मूल शर्तें पूरी होती हैं और न्यायालय, उपर उल्लिखित कारकों पर विचार करने के बाद, आश्वस्त होता है और इस राय का होता है कि तलाक की डिक्री प्रदान की जानी चाहिए।

(जोर दिया गया)

8. हालाँकि **अमरदीप सिंह** (उपरोक्त) और **अमित कुमार** (उपरोक्त) दोनों मामलों में सर्वोच्च न्यायालय ने यह कानून तय किया था कि सेक्शन 13-B का सब-सेक्शन (2) सिर्फ एक गाइडलाइन (डायरेक्टरी) है, लेकिन हमें यह देखना है कि क्या **शिल्पा शैलेश** (उपरोक्त) के पैराग्राफ 33 से यह कहा जा सकता है कि बड़ी बेंच, इशारों-इशारों में, संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति का जिक्र कर रही थी। हमारी राय है कि [शिल्पा शैलेश (उपरोक्त)] के पैराग्राफ 33 से यह नहीं कहा जा सकता कि कानून के पहले के फैसलों को कमजोर किया गया था। ऐसा इसलिए है क्योंकि बड़ी पीठ ने उसके तुरंत बाद कहा था कि, कई मुकदमों के कारण समाधान में रुकावट आ सकती है, क्योंकि समझौता पूरी तरह से और व्यापक होना चाहिए, क्योंकि इसका मकसद और उद्देश्य पक्षकारों को साथ रहने में मदद करना है, या अगर वे अलग होने का फैसला करते हैं तो नई शुरुआत करना और शांति से रहना है। **शिल्पा शैलेश** (उपरोक्त) के पैराग्राफ 35 और 36 नीचे दिए गए हैं।

"35. इसलिए, बी.एस. जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य में, इस न्यायालय ने इस बात के बावजूद कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के अंतर्गत अपराध के शमन (समझौते) की अनुमति नहीं देती है, यह अभिनिर्धारित किया है कि उच्च न्यायालय, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करते हुए, गैर-शमनीय (असमझौतावादी) अपराधों में भी अभियोजन को निरस्त कर सकता है जब न्याय के उद्देश्य के लिए ऐसा आवश्यक हो। इस दृष्टिकोण की पुष्टि तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा **ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य** में की गई है और एक अन्य तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा **जितेंद्र रघुवंशी बनाम बबीता रघुवंशी** में इसे दोहराया गया है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



36. इसका कारण यह है कि न्यायालयों को वैवाहिक मुकदमों को बढ़ावा नहीं देना चाहिए, और ऐसे मुकदमों को लंबा खींचना दोनों ही पक्षकारों के लिए हानिकारक होता है जो कई मुकदमों की पैरवी में अपनी युवावस्था खो देते हैं। इस प्रकार, अत्यधिक तकनीकी दृष्टिकोण अपनाना प्रतिकूल साबित हो सकता है क्योंकि मामलों का लंबित रहना ही अपने आप में पीड़ा, कष्ट और उत्पीड़न का कारण बनता है और परिणामस्वरूप, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि वैवाहिक मामलों का सौहार्दपूर्ण ढंग से समाधान किया जाए, जिससे उनकी मानसिक वेदना, दुख और संताप का अंत हो सके। इस संबंध में, न्यायालयों को केवल यह जांच करनी होती है और सुनिश्चित करना होता है कि पक्षकारों के बीच समझौता बिना किसी दबाव, बल, ज़बरदस्ती, कपट, मिथ्या निरूपण या असम्यक प्रभाव के हुआ है, और सहमति वास्तव में स्वतंत्र इच्छा और पसंद से दी गई है, तथा पक्षकारों की स्वायत्तता से कोई समझौता नहीं किया गया है। ज्ञान सिंह और जितेंद्र रघुवंशी के बाद के दो निर्णयों में यह उल्लेख किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति व्यापक है और इसका उपयोग न्याय के उद्देश्यों को सुनिश्चित करने तथा न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाही को निरस्त करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि इसका प्रयोग अत्यंत विरले मामलों में, सावधानीपूर्वक और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए।"

9. हम इस घोषित कानून से आश्वस्त हैं कि धारा 13-ख की उपधारा (2) के प्रावधान निर्देशिका (निदेशात्मक) हैं न कि अनिवार्य। यह भी सत्य है कि इन प्रावधानों को चयनात्मक रूप से निर्देशिका नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि जहाँ प्रतीक्षा अवधि (क्लिंग-ऑफ अवधि) से छूट दी जा सकती है, वहीं इसकी अंतिम सीमा में छूट नहीं दी जा सकती। हमारा यह भी विचार है कि प्रथम प्रस्ताव की प्रस्तुति से 18 महीने की अंतिम सीमा धारा 13-ख की उपधारा (2) में इस अनुमान के उद्देश्य से प्रदान की गई थी कि समय सीमा के भीतर द्वितीय प्रस्ताव प्रस्तुत न करने पर सहमति वापस ले ली गई है। इस धारा द्वारा प्रदान की गई व्यवस्था स्पष्ट रूप से यह दर्शाती है कि न्यायालय को पक्षकारों की पारस्परिक सहमति से संतुष्ट होना चाहिए, जैसा कि पारित डिक्री की तिथि से विवाह विच्छेद के लिए संयुक्त याचिका में सत्यतापूर्वक कहा गया है। हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में, पक्षकार अभी भी सम्मानपूर्वक अलग होने और अपने जीवन में आगे बढ़ने की इच्छा के संबंध में सहमत हैं।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



10. आक्षेपित निर्णय से यह प्रतीत होता है कि प्रथम प्रस्ताव विधिवत प्रस्तुत किया गया था। द्वितीय प्रस्ताव में विलंब हुआ था परंतु इस बीच प्रथम प्रस्ताव वापस नहीं लिया गया था। आक्षेपित निर्णय में अन्यथा ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि कुटुंब न्यायालय पक्षकारों को सुनने और अपनी समझ के अनुसार उचित जांच करने के पश्चात इस बात से संतुष्ट नहीं था कि विवाह संपन्न हुआ था। अपीलीय न्यायालय के रूप में, जो निरंतर चल रहे वाद के न्यायनिर्णयन में कार्यरत है, इस प्रकार संतुष्ट होने के पश्चात हम आक्षेपित निर्णय को उलटते हैं और निर्देश देते हैं कि वैवाहिक मामले को उसकी फाइल और संख्या पर पुनर्स्थापित किया जाए, ताकि पक्षकार पुनर्स्थापना के दो सप्ताह के भीतर द्वितीय प्रस्ताव दायर कर सकें। कुटुंब न्यायालय इसके पश्चात कानून के अनुसार दायर दोनों प्रस्तावों पर मामले की सुनवाई करेगा। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ऊपर दिए गए निर्देशानुसार पुनर्स्थापना की सूचना पर द्वितीय प्रस्ताव दायर करने में चूक होने पर, मामला तत्काल खारिज कर दिया जाएगा।

11. हम यह भी जोड़ते हैं कि कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 की उपधारा (2) के अंतर्गत रोक के बावजूद हमने अपील को पोषणीय माना है, क्योंकि यद्यपि आक्षेपित निर्णय धारा 13-ख का आह्वान करने वाली याचिका पर था, परंतु यह सहमति के आधार पर पारित नहीं किया गया था और इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि पक्षकारों ने हमारे समक्ष अपील में एक-दूसरे का समर्थन किया है।

12. अपील स्वीकार की जाती है और निस्तारित की जाती है। रजिस्ट्री इस निर्णय की सूचना कुटुंब न्यायालय को प्रेषित करे।

18 फरवरी 2026

सैलेश

(न्यायमूर्ति अरिंदम सिंहा)

(न्यायमूर्ति सत्य वीर सिंह)